डा० हरिवल्लभ चुन्नीलाल भायाणी
एम० ए०, पी-एच० डी०, प्राध्यापक भारतीय विद्याभवन, बम्बई

तीन अर्धमागधी शब्दों की कथा

जैनधर्म और दर्शन के मूल-स्रोत होने के कारण तो जैन आगम-ग्रंथ अमूल्य हैं ही. इसके अतिरिक्त केवल ऐतिहासिक दृष्टि से भी आगमगत सामग्री का अनेक विध महत्त्व सर्व-विदित है. भारतीय आर्यभाषाओं के क्रम-विकास के अध्ययन के लिए आगमिक भाषा एक रत्न-भण्डार सी है. इस दृष्टि से अर्धमागधी को लेकर बहुत-से विद्वानों ने विवरणात्मक, तुलनात्मक और ऐसिहासिक अनुसन्धान किया है. मगर बहुत कुछ कार्य अब भी अनुसंधायकों की प्रतीक्षा कर रहा है. विशेष करके अनेक आगमिक शब्दों के सूक्ष्म अर्थ-लेश के विषय में और उनके अर्वाचीन हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओं के शब्दों से संबन्ध के विषय में गवेषणा के लिए विस्तृत अवकाश है. इस विषय का महत्त्व जितना अर्वाचीन भाषाओं के इतिहास की दृष्टि से है उतना ही अर्धमागधी को रसिक और परिचित बनाने की दृष्टि से भी है. यहाँ पर तीन अर्धमागधी शब्दों की इस तौर पर चर्चा करने का इरादा है. ये शब्द हैं—**पिट्ठुंडी**—'आटे की लोई, **उत्तुप्पिय**—'चुपडा हुआ, 'चिकना' और **पयण**—'कडाही.

१ पिट्ठुंडी

'नायाधम्मकहा अङ्ग के तीसरे अध्ययन 'अण्डक' में मोरनी के अंडों के वर्णन में अंडों को पुष्ट, निष्पन्न, व्रणरहित, अक्षत और 'पिट्ठुंडीपंडुर' कहा गया है. इस विशेषण में 'पिट्ठुंडी' का अर्थ अभयदेवसूरि ने इस प्रकार किया है—'पिष्टस्य-शालिलोट्टस्य-उंडी पिण्डी'. फलस्वरूप उक्त विशेषण का अर्थ होगा 'चावल के आटे के पिण्ड जैसा श्वेत'.

'पिट्ठुंडी' शब्द पिट्ठ+उंडी से बना है. 'पिट्ठ'=सं०'पिष्ट'. 'पिष्ट' का मूल अर्थ है 'पीसा हुआ,' बाद में उसका अर्थ हुआ 'चूर्ण' और फिर 'अन्न का चूर्ण'. मराठी 'पीठ' (आटा), हिन्दी 'पीठी', गुजराती 'पीठी' आदि का सम्बन्ध इस 'पिष्ट'—'पिट्ठ' के साथ है. 'नाज के चूर्ण' इस अर्थ वाले 'आटा' 'लोट'(गुजराती) और 'पीठ' इन तीनों शब्दों का मूल अर्थ केवल 'चूर्ण' था. इनके प्राकृत रूप थे–'अट्ट', 'लोट्ट' और 'पिट्ठ'.

शेष 'उंडी' का अर्थ है 'पिण्डिका' या 'छोटा पिण्ड'. जैसे यहाँ पर 'पिट्ठुंड' में 'उंड' का प्रयोग 'पिट्ठ' के साथ हुआ है वैसे ओघनिर्युक्तिभाष्य में 'उंड' का विस्तारित रूप 'उंडग' 'मंस' के साथ (मंसउंडग) और विपाकश्रुत में 'हियय' (हृदय) के साथ 'हिययउंडय' हुआ है. पिण्डनिर्युक्ति में 'मंसुंडग' रूप मिलता है. इसके अतिरिक्त नायाधम्मकहा के पंद्रहवें अध्ययन में 'भिच्छुंड' शब्द 'भिखारी' अर्थ में प्रयुक्त है. इस में 'भिक्षा+उंड' ऐसे अवयव हैं और इनसे 'भिक्षा-पिण्ड पर निर्वाह करने वाला' ऐसा अर्थ प्रतीत होता है. 'भिच्छुंड' के स्थान पर 'भिक्खुंड' और 'भिक्खोंड' भी मिलते हैं. संस्कृत में 'उण्डुक' (शरीर का एक अवयव) और 'उण्डेरक' (पिष्टपिण्ड) के प्रयोग मिलते हैं.

अर्वाचीन भाषाओं में मराठी 'उंडा' (—लोई) और उंडी (—भात का पिण्ड), गुजराती 'ऊंडल'(–'गुल्म-रोग') तथा सिंहली 'उण्डिय' (—गेंद) में एवं हिन्दी 'मसूड़ा' (—सं० मांसोण्डक, प्रा० मंसुंडय) में 'उंड' शब्द सुरक्षित है. टर्नर के अनुसार "उंड' मूल में द्राविड़ी शब्द है. तमिल में 'उण्टै' मलयालम् में 'उण्डा', और कन्नड़ में 'उण्डे' ये शब्द 'गेंद' या 'गोल पिण्ड' के अर्थ में प्रचलित हैं. इन सब से 'पिट्ठुंडी' का (चावल के) 'आटे की लोई' यह अर्थ समर्थित होता है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तुप्पिय

प्रश्नव्याकरणसूत्र में तीसरे अधर्मद्वार में चौरिका के फलवर्णन में वधस्थान की ओर जाते समय चौरों की भयभीत दशा चित्रित करते कहा गया है:

मरण-भउप्पण्ण-सेद-आयत-णेहुत्तुप्पिय-किलिन्न-गत्ता ।

'जिन के गात्र मरण-भय से उत्पन्न स्वेद के सहजात स्नेह से लिप्त और भीगे हुए हैं.'

यहाँ पर 'उत्तुप्पिय' शब्द 'स्नेह-लिप्त' 'चिकना' इस अर्थ में आया है. विपाकश्रुत में भी इसका प्रयोग हुआ है. ज्ञातधर्म-कथा में, कल्पसूत्र में, गाथासप्तशती में 'चुपड़ा हुआ' 'लिप्त' इस अर्थ में, ओघनिर्युक्ति-भाष्य में 'स्निग्ध' इस अर्थ में तथा 'सेतुबन्ध' आदि में 'घी' इस अर्थ में 'तुप्प' शब्द प्रयुक्त है. हेमचन्द्राचार्य ने देशीनाममाला में 'तुप्प' के 'अक्षित' 'स्निग्ध' और 'कुतुप' अर्थ दिए हैं. अभिधानराजेन्द्रकोष में 'तुप्पग्ग' (जिसका अग्रभाग अक्षित है) और 'तुप्पोट्ठ' (जिसका ओष्ठ अक्षित है) दिए हैं. अपभ्रंश साहित्य में 'तुप्प' के कई प्रयोग मिलते हैं.

'तुप्प' से नाम धातु 'उत्तुप्प' बना और इसके कर्मणि भूतकृदंत 'उत्तुप्पिय' का अर्थ है 'स्निग्ध पदार्थ से लिप्त'. ऐसे 'उद्' लगाकर क्रियापद बनाने की प्रक्रिया प्राकृत 'उद्धूलिय' (—उद्धूलित, धूलिलिप्त) उद्धूविय (उद्धूपित) इत्यादि में है. 'तुप्प' से इसी अर्थ में 'तुप्पलिय' (घृतलिप्त, चिकना) बना है, और 'गाथासप्तशती' में इसका प्रयोग है. 'तुप्प' से सिद्ध मराठी 'तूप' शब्द 'घी' अर्थ में अभी प्रचलित है. कन्नड़ में भी इसी अर्थ में 'तुप्प' शब्द व्यवहृत होता है. मूल मृक्षण वाचक 'तुप्प' चोप्पड' और 'मक्खण' (सं० अक्षण) शब्द बाद में 'घी' 'तेल' 'मक्खन' जैसे स्निग्ध पदार्थों के वाचक बन गए हैं.

३ पयण

'नायाधम्मकहा' के 'शैलक' अध्ययन में अशुचि वस्त्र की शुद्धि-क्रिया के वर्णन में कहा गया है कि ... .के बाद वस्त्र को **'पयणं अरुहेई'**.

वृत्तिकार ने अर्थ किया है 'पाकस्थाने चूल्ल्यादौ वाऽऽरोपयति'. यह तो भावार्थ हुआ. क्योंकि वस्त्र को पाकस्थान में अथवा चूल्हे पर चढ़ाने से 'पचन' का सामान्य अर्थ समझा जाता है. चढ़ाने की क्रिया पर बल देने से लगता है कि यहाँ 'पयण' या पचन शब्द प्रक्रिया के अर्थ में नहीं, पर साधन के अर्थ में लेना उचित है. 'पचन' 'पकाने का पात्र'. चूल्हे पर कडाही में गरम पानी में मलिन वस्त्र को उबालने से उसकी स्वच्छता सिद्ध होती है. सूत्रकृताङ्गनिर्युक्ति में तथा जीवा-जीवाभिगमसूत्र में 'पयण' या 'पयणग' का 'पचन-पात्र' के अर्थ में प्रयोग है ही. अर्वाचीन भाषाओं में गुजराती 'पेणी' (कड़ाही), 'पेणो' (कडाहा) एवं नैपाली 'पैनी' (—मद्य निथारने का बरतन) मूलतः प्राकृत के 'पयण' सं० 'पचन' से निष्पन्न हुए हैं. अर्वाचीन प्रयोग के आधार पर किसी ने संस्कृत में भी' 'पचनिका' शब्द बना दिया है.

इस तरह आगम-ग्रंथों के अनेक शब्दों के इतिहास की शृंखला प्रवर्तमान भाषाओं पर्यन्त अविच्छिन्न रूप में चली आई जान पड़ती है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org